Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XI, Issue No. 22, July-2016, ISSN 2230-7540

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के आत्मविश्वास, सामाजिक परिपक्वता का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति से संबंध का एक अध्ययन (जिला - गया, बिहार के सन्दर्भ में)

Vinay Kumar[1]* Dr. Seema Pandey[2]

[1]Research Scholar, Satya Sai University, Shehore

[2]Dean

सारांश – शिक्षा द्वारा ही बालक के व्यक्ति का बहुमुखी विकास सम्भव होता है। यही कारण है कि शिक्षार्जन की दृष्टि से विद्यार्थी जीवन का महत्व सर्वविदित है। उच्च माध्यमिक स्तर के अधिकांश छात्र–छात्राएं किशोरावस्था में होते हैं। इस अवस्था को मनोवैज्ञानिकों ने अत्यन्त संवेदनशील व संवेगात्मक रूप से आस्थिर माना है। इस अवस्था में छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में जब सामाजिक परिपक्वता व आत्मविश्वास की कमी हो जाती है तो वे शैक्षिक व व्यक्तिगत समस्याओं का सामना ठीक से नहीं कर पाते, जिससे उनमें कुण्ठा का भाव उत्पन्न हो जाता है। यह कुण्ठा उनके शैक्षिक निष्पत्ति को प्रभावित करती है जिसके कारण उनके विकास एवं समायोजन में बाधा उत्पन्न होती है। अनुशासनहीनता की समस्या भी कुण्ठा के कारण उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता, आत्मविश्वास तथा कुण्ठा का उनके शैक्षिक निष्पत्ति से अन्तर्सम्बन्धों को समझना परम आवश्यक है। इसे भलीभाँति समझकर ही हम विद्यालय तथा घरो में छात्र–छात्राओं को ऐसा शैक्षिक एवं सामाजिक वातावरण दे सकेंगे कि उनके सामाजिक परिपक्वता एवं आत्मविश्वास का विकास हो सके तथा कुण्ठा उत्पन्न न हो।

----------X----------

प्रस्तावना

मानव जीवन में शिक्षा का महत्व दिनों दिन बढ़ता जा रहा है। शिक्षा–प्रक्रिया के तीन महत्वपूर्ण अंग हैं– शिक्षक, शिक्षार्थी एवं पाठ्यक्रम। प्राचीन समय में शिक्षा का केन्द्र बिन्दु शिक्षक होता था। किन्तु आज की निरन्तर परिवर्तित परिस्थितियों के अन्तर्गत शिक्षा के क्षेत्र में नवीन क्रान्ति का सूत्रपात हुआ। परिणामस्वरूप शिक्षा का केन्द्र बिन्दु बालक को माना गया तथा शैक्षिक प्रक्रिया के अन्य अंग इसके चारों ओर घूमने लगे। इसी को सिद्वान्त मानकर वर्तमान समय में शिक्षा की व्यूहरचना की जाती है। ऐसी स्थिति में बालकों के व्यक्तित्व तथा उनकी क्षमताओं को समझना परम आवश्यक है। बालकों के व्यक्तित्व को समझे बिना उन्हें शिक्षा देना उचित नहीं है। इसके दुष्परिणाम बेरोजगारी, भ्रष्टाचार, हिंसा, अनुशासनहीनता तथा युवा–आक्रोश के रूप में हमारे सामने हैं।

अतएव वर्तमान समय में सारे देश का शैक्षिक जगत इस प्रयास में रुचि ले रहा है कि शिक्षा सम्बन्धी नवीन नीति निर्धारित की जाय। इस नयी नीति में विशेष ध्यान बालक के व्यक्तित्व पर केन्द्रित किया जाना चाहिए। चूँकि आज के बालक में ही कल के सुन्दर व स्वस्थ समाज के बीज निहित होते हैं इसलिए बालक का विद्यार्थी जीवन में सुयोग्य, संयमी, सदाचारी, चरित्रवान, सामाजिक रूप से परिपक्व तथा आत्मविश्वास से युक्त होना आवश्यक है यदि देश के भावी नागरिक इन गुणों से युक्त नहीं हैं तो वर्तमान समस्याओं का वैज्ञानिक निराकरण सम्भव नहीं होगा।

मानव विकास के इतिहास में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। मानव अपने जन्म–काल में असहाय होता है, उसे जीवित रहने के लिए समायोजन की आवश्यकता होती है। समायोजन की इस प्रक्रिया में इसका सीखना प्रारम्भ होता है। सीखने की यह प्रक्रिया बालक के जन्म लेते ही प्रारम्भ हो जाती है और जीवन –पर्यन्त चलती रहती है। सर्व प्रथम बालक की शिक्षा का कार्य माता की गोद से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार माँ प्रथम शिक्षिका होती है। माता के साथ–साथ बालक पिता के सम्पर्क में आता है। पिता भी उसके सीखने के कार्य में योगदान देता है। इस प्रकार धीरे–धीरे शिक्षा कार्य का दायित्व पूरे परिवार का हो जाता है। जब सामाजिक ढ़ाँचें का निर्माण हुआ तो शिक्षा कार्य समाज का महत्वपूर्ण अंग बन गया। समाज द्वारा शिक्षा प्रदान करने का दायित्व समाज के कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को दिया गया जिन्हें शिक्षक अथवा अध्यापक कहा जाने लगा। शिक्षा ग्रहण करने वाले व्यक्ति को विद्यार्थी अथवा छात्र कहा गया है। विद्यार्थी सुयोग्य अध्यापकों के पथ–प्रदर्शन में ही अपने श्रेष्ठतम् विकास को प्राप्त करता है। शिक्षार्थी बहुत कुछ अध्यापकों के व्यवहारों एवं आदर्शों के अनुकरण द्वारा भी सीखते हैं। इस प्रकार देश और काल के अनुरूप बालकों को शिक्षा प्रदान कर अध्यापक उन्हें इस योग्य बनाता है कि वे भविष्य में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अपनी भूमिका का उचित निर्वाह कर सकें।

www.ignited.in

साहित्य की समीक्षा

सामाजिक न्याय और लोकतन्त्र की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि देश के प्रत्येक नागरिक को शिक्षा सुलभ हो। लोकतंत्र का आधार शिक्षा और शिक्षित नागरिक होते हैं। जो चुनाव करते हैं और जिनको चुना जाता है। शिक्षा के अभाव में नागरिक अपने कर्तव्यों तथा अधिकारों से अनभिज्ञ रहता है। प्रजातांत्रिक जीवन को अंगीकार किये हुए व्यक्ति का निर्माण शिक्षा द्वारा ही सम्भव है भारत की एक तिहाई जनसंख्या निरक्षर है। निरक्षर जनसंख्या अंधविश्वास एवं रूढ़िवादिता में फंसकर ही अपना जीवन व्यर्थ व्यतीत कर देती है। उनके जीवन के स्तर को ऊँचा उठाने के लिए विकास क्रम में उनको जोड़ने के लिए शिक्षा का सार्वभौमीकरण आवश्यक है। शिक्षा के सार्वभौमीकरण के पश्चात् ही गरीब जनता को शिक्षित कर पाना सम्भव है। क्योंकि शिक्षा एक ऐसी मशाल है जो आने वाली पीढ़ी की शिक्षा तय करके उसे प्रकाशमान बनाने में उसकी मदद करती है। प्रत्येक बच्चे के मौलिक हित को ध्यान में रखकर शिक्षा सुलभ करना सामाजिक तथा आर्थिक प्रगति को ओर इंगित करता है।

केन्द्रीय सरकार ने शिक्षा को संविधान के खण्ड चार अर्थात् राज्य के नीति–निर्धारक तत्वों से हटाकर मूल अधिकारों में शामिल कर दिया है। जिससे प्रत्येक बच्चा जो राष्ट का नागरिक है को शिक्षा प्रदान करना तथा शिक्षा प्राप्त करना उसके मूल अधिकारों में आ जाता है। चूँकि शिक्षा वांछनीय सामाजिक परिवर्तन का प्रभावकारी उपकरण है। जो समाज को उसकी आवश्यकतानुरूप बनाने में सक्षम है।3

सुभाषित रत्न संग्रह में कहा गया है ''विद्या माता के समान हमारी रक्षा करती है।, पिता की भांति हित कार्य में लगाती है, पत्नी की तरह खेदों को दूर करती है तथा प्रसन्नता देती है। सम्पूर्ण मानवीय आनन्दों का मूल विद्या ही है इससे हमारी योग्यता मे वृद्धि होती है। राज्य सभा और जनसभा में आदर मिलता है जिससे धन और यश दोनों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार विद्या अथवा शिक्षा अप्रत्यक्ष रूप से हमें मोक्ष प्रदान करती है। वह इहलोक और परलोक दोनों में हमारे पुरुषार्थों की सिद्धि करती है।''4

टैगोर के मत में शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह व्यक्ति को ज्ञानवान बनाकर उसमें स्मृति, तर्क, चिन्तन और कल्पना आदि मानसिक शक्तियों का विकास करने में सफल हो सके परन्तु इस संदर्भ में ध्यान देने योग्य बात यह है कि टैगोर ने मानव के बौद्धिक विकास के लिए पुस्तकीय शिक्षा का विरोध किया और प्रकृति तथा जीवन की प्रत्यक्ष परिस्थितियों का ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक बताया। उनका मत था कि इस प्रकार कि शिक्षा से स्वतंत्र चिन्तन एवं ज्ञानार्जन क्रिया को बहुत अधिक प्रोत्साहन मिलता है। बौद्धिक विकास में विभिन्न प्रकार का ज्ञान संस्कृति एवं नैतिक मूल्यों को परख और उन्हें आत्मसात् करने की क्षमता भी होती है। बौद्धिक विकास के कारण ही भावात्मक अस्थिरता और अपरिपक्वता दूर होती है और सही ढंग से बुद्धि एवं प्रज्ञा का प्रयोग किया जाता है। टैगोर का विचार है कि बौद्धिक उत्तमता विभिन्न मानसिक शक्तियों के शक्तिशाली संगठन का परिणाम है।

डॉ0 अम्बेडकर मानते थे कि ''नास्ति विद्या समम् चक्षुः!'' एवं विद्या गुरुणां गुरू'' ही मानव जीवन का एक मात्र सत्य है। इन सुभाषित वचनों में उनकी अटूट आस्था थी। वे मानते थे कि उत्थान एवं विकास का एक मात्र विद्या (ज्ञान) ही सोपान है। अतः उनका मत था कि ज्ञानार्जन अर्थात् शिक्षा को मौलिक अधिकार का दर्जा देते हुए ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति शिक्षित हो सके। वे कहते थे कि शिक्षा को व्यवसायिक से अधिक बुनियादी बनाया जाना चाहिए।

गांधी जी ने शिक्षा का व्यापक एवं आधुनिक अर्थ लगाया है वे मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास पर जोर देते हैं। उनके अनुसार शिक्षा मनुष्य के सर्वांगीण विकास का वह साधन है जिससे बालक, बालिकाओं में निहित सभी गुणों का सम्यक रूपेण विकास होता है। गांधी जी के ही शब्दों में शिक्षा से मेरा तात्पर्य है कि मनुष्य में निहित शक्तियों का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास सर्वोत्तम रूपेण हो। साक्षरता न तो शिक्षा का अन्त है और न ही प्रारम्भ ही यह तो पुरुष और स्त्री को शिक्षित करने का एक साधन मात्र है।''5

इस प्रकार गांधी जी लिखने पढ़ने के साधारण ज्ञान अर्थात् साक्षरता को शिक्षा न मानकर व्यक्ति की समग्र शक्तियों के विकास को ही शिक्षा की संज्ञा दी है। इस दृष्टि से वे फ्राबेल और पेस्तालॉजी के निकटवर्ती लगते हैं। श्री महादेव देसाई के शब्दों में गांधी जी चाहते थे कि शिक्षा ऐसी हो जो बालक, बालिकाओं को सर्वांगीण मनुष्य बना सके कोई भी शिक्षा गम्भीर नहीं हो सकेगी जो बालक, बालिकाओं को पूर्ण मनुष्य एवं नागरिक न बना सकती हो गांधी जी सच्ची शिक्षा को निरूपित करते हुए अत्यन्त स्पष्ट घोषणा करते हैं कि– ''सच्ची शिक्षा वह है जो बच्चों के आध्यात्मिक, बौद्विक एवं शारीरिक संकायों को उनके अन्दर से बाहर की ओर प्रकट करती है तथा उत्तेजित करती है।''6

गांधी जी के अनुसार सम्पूर्ण ज्ञान का उद्देश्य चरित्र निर्माण होना चाहिए आत्म संस्कार हेतु उन्होंने इस उद्देश्य पर काफी बल दिया था उनका कथन हैं कि– ''मैनें हृदय की संस्कृति या चरित्र निर्माण को सदैव प्रथम स्थान दिया है। मेरी समझ में चरित्र निर्माण स्वस्थ समाज की उपयुक्त आधारशिला है। मैं अनुभव करता हूँ कि यदि हम व्यक्ति का चरित्र निर्माण करने में सफल हो जाते हैं तो समाज स्वयं ही सुधर जायेगा। मैं ऐसे विकसित व्यक्तियों द्वारा सुगठित समाज में विश्वास रखने की सदिच्छा रखूँगा।''7

उपसंहार

प्रस्तुत अध्ययन उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों से सम्बन्धित होने के कारण अत्यन्त महत्वपूर्ण है। चूंकि इस स्तर पर विद्यार्थी किशोरावस्थ में होता है परिणामस्वरूप भविष्य को लेकर इनमें अनेकानेक चिन्ताओं, दिवास्वप्नों, संवेगात्मक अस्थिरताओं तथा कल्पनाओं का बाहुल्य होता है। ऐसे में भविष्य के व्यवसाय तथा तत्सम्बन्धी विषयों का चयन करने में उन्हें अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता होती हैं। इस स्तर पर एक भी गलत कदम उन्हें अपने उद्देश्य से भटका सकता है। अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो गयी है कि इन विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता तथा आत्मविश्वास का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति से धनात्मक सह–सम्बन्ध है। जबकि कुण्ठा के स्तर का शैक्षिक निष्पत्ति से ऋणात्मक सह–सम्बन्ध है। इसके साथ ही सामाजिक परिपक्वता तथा आत्मविश्वास का कुण्ठा के स्तर से ऋणात्मक सह–सम्बन्ध देखने में आया ळें

इस शोध में सामाजिक परिपक्वता आत्मविश्वास तथा कुण्ठा चरों के शैक्षिक निष्पत्ति से बहुचरीय सह–सम्बन्ध के परिणाम एवं

www.ignited.in

शैक्षिक निष्पत्ति के आधार पर पूर्वकथन के लिए विकसित भविष्य कथन समीकरणों के निष्कर्ष से उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की शैक्षिक निष्पत्ति बढ़ाने के आधार एवं तद्नुरूप प्रयास करने के लिए दिशा–निर्देश प्राप्त किये जा सकेंगे। अध्यापकों को इस सम्बन्ध में अपनी शिक्षण–विधियों में वैज्ञानिक दिशा में परिवर्तन करने होंगे साथ ही सामाजिक परिपक्वता तथा आत्मविश्वास में बढ़ोत्तरी करने वाले पाठ्यक्रम चयनित किये जा सकेंगे जिनमें कुण्ठा का स्थान नगण्य होगा। शोध के परिणाम शिक्षा के क्षेत्र में कार्य करने वाले व्यक्तियों, शोधार्थियों, नीति–निर्धारकों, पाठ्यक्रम संरचना से जुड़े विशिष्ट व्यक्तियों, शिक्षा क्षेत्र के विद्वानों, शैक्षिक समितियों हेतु निश्चित रूप से लाभाकारी होंगे। इसके साथ ही शिक्षकों के व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन कर उन्हें उपयुक्त शिक्षण प्रविधियों के चुनाव में सहायता देंगे तथा अभिभावकों को वह आधार प्रदान करेंगे जिससे तदनुरूप शैक्षिक व सामाजिक परिवर्तनों द्वारा भारत के भावी सक्षम, कुशल, स्वावलम्बी आत्मविश्वासी एवं अच्छे नागरिकों के निर्माण में सहायता मिलेगी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

इलहान्स, डी.एन. (2002). फाउण्डेशन आफ इस्टेटिक्स टिक्स, इलाहाबाद, किताब महल, उ.प्र. सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग।

अग्निहोत्री, डा. रेखा (1989). मैनुअल फार अग्निहोत्रीज सेल्फ कान्फीडेन्स इनवेन्ट्री।

अरोड़ा (2004). समृद्धि एण्ड मार्या, एनड्राबी एण्ड शर्मा, नीरू, साइको–सोशल प्रोफाइल आफ विजुअल इम्पायर्ड, अडोल्सेण्ट्स, साइको लिंग्वा वैल्यूम 34. छवण 2।

अस्थाना एवं अग्रवाल (1963). मनोविज्ञान और शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन, आगरा, विनोद पुस्तक मन्दिर।

अस्थाना, अंजू (1984). अस्टडी आफ सोशल मेच्योरिटी अमंग स्कूल गोइंग चिल्ड्रेन इन द सिटी आफ लखनऊ, पी–एच.डी. शिक्षाशास्त्र, लखनऊ यूनिवर्सिटी।

अग्रवाल, एस. के. (1980). शिक्षा के तात्विक सिद्धान्त, मेरठ, राजेश पब्लिशिंग हाउस।

अग्रवाल, डा. जी.के. (1980). मानव समाज, आगरा, ओम प्रिन्टिंग प्रेस पचकुइंया।

अग्रवाल, डा. गोपाल कृष्ण (1994). सामाजिक नियन्त्रण एवं परिवर्तन, आगरा, आगरा बुक स्टोर।

Corresponding Author

Vinay Kumar*

Research Scholar, Satya Sai University, Shehore

E-Mail – chintuman2004@gmail.com